IJMRSETM

e-ISSN: 2395 - 7639

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

IN SCIENCE, ENGINEERING, TECHNOLOGY AND MANAGEMENT

Volume 10, Issue 4, April 2023

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA

Impact Factor: 7.580

+91 99405 72462 +9163819 07438 ijmrsetm@gmail.com www.ijmrsetm.com

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580| A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

| Volume 10, Issue 4, April 2023 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2023.1004013 |

जैन दर्शन में त्रिरत्न की अवधारणा : एक अवलोकन

Dr. Gauri Shankar Soni

Assistant Professor (Guest Faculty), Dept. of Philosophy, M.S.S.G. College, Areraj, East Champaran, Bihar, India

सार

जैन धर्म श्रमण परम्परा से निकला है तथा इसके प्रवर्तक हैं २४ तीर्थंकर, जिनमें प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव (आदिनाथ) तथा अन्तिम तीर्थंकर महावीर स्वामी हैं। जैन धर्म की अत्यन्त प्राचीनता सिद्ध करने वाले अनेक उल्लेख साहित्य और विशेषकर पौराणिक साहित्यो में प्रचुर मात्रा में हैं। श्वेतांबर व दिगम्बर जैन पन्थ के दो सम्प्रदाय हैं, तथा इनके ग्रन्थ समयसार व तत्वार्थ सूत्र हैं। जैनों के प्रार्थना स्थल, जिनालय या मन्दिर कहलाते हैं।[1] कार्य करती है.'जिन परम्परा' का अर्थ है - 'जिन द्वारा प्रवर्तित दर्शन'। जो 'जिन' के अनुयायी हों उन्हें 'जैन' कहते हैं। 'जिन' शब्द बना है संस्कृत के 'जि' धातु से। 'जि' माने - जीतना। 'जिन' माने जीतने वाला। जिन्होंने अपने मन को जीत लिया, अपनी तन मन वाणी को जीत लिया और विशिष्ट आत्मज्ञान को पाकर सर्वज्ञ या पूर्णज्ञान प्राप्त किया उन आप्त पुरुष को जिनेन्द्र या जिन कहा जाता है'। जैन धर्म अर्थात 'जिन' भगवान् का धर्म।अहिंसा जैन धर्म का मूल सिद्धान्त है। इसे बड़ी सख्ती से पालन किया जाता है खानपान आचार नियम मे विशेष रुप से देखा जा सकता है। जैन दर्शन में कण-कण स्वतंत्र है इस सृष्टि का या किसी जीव का कोई कर्ताधर्ता नही है। सभी जीव अपने अपने कर्मों का फल भोगते है। जैन दर्शन में भगवान न कर्ता और न ही भोक्ता माने जाते हैं। जैन दर्शन मे सृष्टिकर्ता को कोई स्थान नहीं दिया गया है। जैन धर्म में अनेक शासन देवी-देवता हैं पर उनकी आराधना को कोई विशेष महत्व नहीं दिया जाता। जैन धर्म में तीर्थंकरों जिन्हें जिनदेव, जिनेन्द्र या वीतराग भगवान कहा जाता है इनकी आराधना का ही विशेष महत्व है। इन्हीं तीर्थंकरों का अनुसरण कर आत्मबोध, ज्ञान और तन और मन पर विजय पाने का प्रयास किया जाता है।

परिचय

जैन ईश्वर को मानते हैं जो सर्व शक्तिशाली त्रिलोक का ज्ञाता द्रष्टा है पर त्रिलोक का कर्ता नही | जैन धर्म में जिन या अरिहन्त और सिद्ध को ईश्वर मानते हैं।[1] अरिहंतो और केवलज्ञानी की आयुष्य पूर्ण होने पर जब वे जन्ममरण से मुक्त होकर निर्वाण को प्राप्त करते है तब उन्हें सिद्ध कहा जाता है। उन्हीं की आराधना करते हैं और उन्हीं के निमित्त मंदिर आदि बनवाते हैं। जैन ग्रन्थों के अनुसार अर्हत् देव ने संसार को द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा से अनादि बताया है। जगत का न तो कोई कर्ता है और न जीवों को कोई सुख दुःख देनेवाला है। अपने अपने कर्मों के अनुसार जीव सुख दुःख पाते हैं। जीव या आत्मा का मूल स्वभान शुद्ध, बुद्ध, सच्चिदानंदमय है, केवल पुदगल या कर्म के आवरण से उसका मूल स्वरुप आच्छादित हो जाता है। जिस समय यह पौद्गलिक भार हट जाता है उस समय आत्मा परमात्मा की उच्च दशा को प्राप्त होता है। जैन मत 'स्याद्वाद' के नाम से भी प्रसिद्ध है।[2] स्याद्वाद का अर्थ है अनेकांतवाद अर्थात् एक ही पदार्थ में नित्यत्व और अनित्यत्व, साद्दश्य और विरुपत्व, सत्व और असत्व, अभिलाष्यत्व और अनभिलाष्यत्व आदि परस्पर भिन्न धर्मों का सापेक्ष स्वीकार। इस मत के अनुसार आकाश से लेकर दीपक पर्यंत समस्त पदार्थ नित्यत्व और अनित्यत्व आदि उभय धर्म युक्त है। वैदिक दर्शन परम्परा में भी ऋषभदेव का विष्णु के 24 अवतारों में से एक के रूप में संस्तवन किया गया है। भागवत में अर्हन् राजा के रूप में इनका विस्तृत वर्णन है।[3]

हिन्दूपुराण श्रीमद्भागवत के पाँचवें स्कन्ध के अनुसार मनु के पुत्र प्रियव्रत के पुत्र आग्नीध्र हुये जिनके पुत्र राजा नाभि (जैन धर्म में नाभिराय नाम से उल्लिखित) थे। राजा नाभि के पुत्र ऋषभदेव हुये जो कि महान प्रतापी सम्राट हुये। भागवतपुराण अनुसार भगवान ऋषभदेव का विवाह इन्द्र की पुत्री जयन्ती से हुआ। इससे इनके सौ पुत्र उत्पन्न हुये। उनमें भरत चक्रवर्ती सबसे बड़े एवं गुणवान थे।[2] उनसे छोटे कुशावर्त, इलावर्त, ब्रह्मावर्त, मलय, केतु, भद्रसेन, इन्द्रस्पृक, विदर्भ और कीकट ये नौ राजकुमार शेष नब्बे भाइयों से बड़े एवं श्रेष्ठ थे। उनसे छोटे कवि, हरि, अन्तरिक्ष, प्रबुद्ध, पिप्पलायन, आविर्होत्र, द्रुमिल, चमस और करभाजन थे।[4]

विष्णु पुराण में श्री ऋषभदेव, मनुस्मृति में प्रथम जिन (यानी ऋषभदेव) स्कंदपुराण, लिंगपुराण आदि में बाईसवें तीर्थंकर अरिष्टनेमि का उल्लेख आया है।

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580| A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

| Volume 10, Issue 4, April 2023 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2023.1004013 |

जैन नगर पुराण में कलयुग में एक जैन मुनि को भोजन कराने का फल सतयुग में दस ब्राह्मणों को भोजन कराने के बराबर कहा गया है। अंतिम दो तीर्थंकर, पार्श्वनाथ और महावीर स्वामी ऐतिहासिक पुरुष है[3]। महावीर का जन्म ईसा से 599 वर्ष पहले होना ग्रंथों से पाया जाया है। शेष के विषय में अनेक प्रकार की अलौकिक और प्रकृतिविरुद्ध कथाएँ हैं। ऋषभदेव की कथा भागवत आदि कई पुराणों में आई है और इनमें विष्णु के २४ अवतारों के रूप में की गई है। महाभारत के अनुशासन पर्व, महाभारत के शांतिपर्व, स्कन्ध पुराण, जैन प्रभास पुराण, जैन लंकावतार आदि अनेक ग्रंथो में अरिष्टनेमि का उल्लेख है।[5]

रागद्वेषी शत्रुओं पर विजय पाने के कारण 'वर्धमान महावीर' की उपाधि 'जिन' थी। अतः उनके द्वारा प्रचारित धर्म 'जैन' कहलाता है। जैन पन्थ में अहिंसा को परमधर्म माना गया है। सब जीव जीना चाहते हैं, मरना कोई नहीं चाहता, अतएव इस धर्म में प्राणिवध के त्याग का सर्वप्रथम उपदेश है। केवल प्राणों का ही वध नहीं, बल्कि दूसरों को पीड़ा पहुँचाने वाले असत्य भाषण को भी हिंसा का एक अंग बताया है। महावीर ने अपने शिष्यों तथा अनुयायियों को उपदेश देते हुए कहा है कि उन्हें बोलते-चालते, उठते-बैठते, सोते और खाते-पीते सदा यत्नशील रहना चाहिए। अयत्नाचार पूर्वक कामभोगों में आसक्ति ही हिंसा है, इसलिये विकारों पर विजय पाना, इन्द्रियों का दमन करना और अपनी समस्त वृत्तियों को संकुचित करने को जैन पन्थ में सच्ची अहिंसा बताया है। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और वनस्पति में भी जीवन है, अतएव पृथ्वी आदि एकेन्द्रिय जीवों की हिंसा का भी इस धर्म में निषेध है।[6]

जैन पन्थ का दूसरा महत्वपूर्ण सिद्धान्त है कर्म महावीर ने बार बार कहा है कि जो जैसा अच्छा, बुरा कर्म करता है उसका फल अवश्य ही भोगना पड़ता है तथा मनुष्य चाहे जो प्राप्त कर सकता है, चाहे जो बन सकता है, इसलिये अपने भाग्य का विधाता वह स्वयं है। जैनधर्म में ईश्वर को जगत् का कर्त्ता नहीं माना गया, तप आदि सत्कर्मों द्वारा आत्मविकास की सर्वोच्च अवस्था को ही ईश्वर बताया है। यहाँ नित्य, एक अथवा मुक्त ईश्वर को अथवा अवतारवाद को स्वीकार नहीं किया गया। ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, मोहनीय, अन्तराय, आयु, नाम और गोत्र इन आठ कर्मों का नाश होने से जीव जब कर्म के बन्धन से मुक्त हो जाता है तो वह ईश्वर बन जाता है तथा राग-द्वेष से मुक्त हो जाने के कारण वह सृष्टि के प्रपंच में नहीं पड़ता।[7]

जैन धर्म के मुख्यतः दो सम्प्रदाय हैं श्वेताम्बर (उजला वस्त्र पहनने वाला)और दिगम्बर (नग्न रहने वाला) ।

जैनधर्म में जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल नाम के छ: द्रव्य माने गए हैं। ये द्रव्य लोकाकाश में पाए जाते हैं, अलोकाकाश में केवल आकाश ही है। जीव, अजीव, आस्रव, बन्ध सँवर, निर्जरा और मोक्ष ये सात तत्व है। इन तत्वों के श्रद्धान से सम्यग्दर्शन की प्राप्ति होती है। सम्यग्दर्शन के बाद सम्यग्ज्ञान और फिर व्रत, तप, संयम आदि के पालन करने से सम्यक्चारित्र उत्पन्न होता है। इन तीन रत्नों को मोक्ष का मार्ग बताया है। जैन सिद्धान्त में रत्नत्रय की पूर्णता प्राप्त कर लेने पर मोक्ष की प्राप्ति होती है। ये 'रत्नत्रय ' हैं-सम्यक् दर्शन ,सम्यक् ज्ञान तथा सम्यक् चारित्र्य।मोक्ष होने पर जीव समस्त कर्मों के बन्धन से मुक्त हो जाता है, और ऊर्ध्वगति होने के कारण वह लोक के अग्रभाग में सिद्धशिला पर अवस्थित हो जाता है। उसे अनंत दर्शन, अनन्त ज्ञान, अनन्त सुख और अनन्त वीर्य की प्राप्ति होती है और वह अन्तकाल तक वहाँ निवास करता है, वहाँ से लौटकर नहीं आता।[8]

अनेकान्तवाद जैन पन्थ का तीसरा मुख्य सिद्धान्त है। इसे अहिंसा का ही व्यापक रूप समझना चाहिए। राग द्वेषजन्य संस्कारों के वशीभूत ने होकर दूसरे के दृष्टिबिन्दु को ठीक-ठीक समझने का नाम अनेकान्तवाद है। इससे मनुष्य सत्य के निकट पहुँच सकता है। इस सिद्धान्त के अनुसार किसी भी मत या सिद्धान्त को पूर्ण रूप से सत्य नहीं कहा जा सकता। प्रत्येक मत अपनी अपनी परिस्थितयों और समस्याओं को लेकर उद्भूत हुआ है, अतएव प्रत्येक मत में अपनी अपनी विशेषताएँ हैं। अनेकान्तवादी इन सबका समन्वय करके आगे बढ़ता है। आगे चलकर जब इस सिद्धान्त को तार्किक रूप दिया गया तो यह स्याद्वाद नाम से कहा जाने लगा तथा, स्यात् अस्ति', 'स्यात् नास्ति', स्यात् अस्ति नास्ति', 'स्यात् अवक्तव्य,' 'स्यात् अस्ति अवक्तव्य', 'स्यात् नास्ति अवक्तव्य' और 'स्यात् अस्ति नास्ति अवक्तव्य', इन सात भागों के कारण सप्तभंगी नाम से प्रसिद्ध हुआ।[9]

पार्श्वनाथ के चार महाव्रत थे

1.अहिंसा
2.सत्य
3.अस्तेय
4.अपरिग्रह

महावीर ने पाँचवा महाव्रत 'ब्रह्मचर्य' के रूप में भी स्वीकारा।जैन सिद्धांतों की संख्या 45 है, जिनमें 11 अंग हैं।

जैन सम्प्रदाय में पञ्चास्तिकायसार, समयसार और प्रवचनसार को 'नाटकत्रयी ' कहा जाता है।

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580| A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

| Volume 10, Issue 4, April 2023 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2023.1004013 |

जैन के मत में 3 प्रमाण हैं-प्रत्यक्ष,अनुमान तथा आगम(आगम)।[10]

जैन पन्थ में आत्मशुद्धि पर बल दिया गया है। आत्मशुद्धि प्राप्त करने के लिये जैन पन्थ में देह-दमन और कष्टसहिष्णुता को मुख्य माना गया है। निर्ग्रंथ और निष्परिग्रही होने के कारण तपस्वी महावीर नग्न अवस्था में विचरण किया करते थे। यह बाह्य तप भी अन्तरंग शुद्धि के लिये ही किया जाता था। प्राचीन जैन सूत्रों में कहा गया है कि भले ही कोई नग्न अवस्था में रहे या एक एक महीने उपवास करे, किन्तु यदि उसके मन में माया है तो उसे सिद्धि मिलने वाली नहीं। जैन आचार-विचार के पालन करने को 'शूरों का मार्ग' कहा गया है। जैसे लोहे के चने चबाना, बालू का ग्रास भक्षण करना, समुद्र को भुजाओं से पार करना और तलवार की धार पर चलना दुस्साध्य है, वैसे ही निर्ग्रंथ प्रवचन के आचरण को भी दुस्साध्य कहा गया है।

बौद्ध पन्थ की भाँति जैन पन्थ में भी जाति भेद को स्वीकार नहीं किया गया। प्राचीन जैन ग्रन्थों में कहा गया है कि सच्चा ब्राह्मण वही है जिसने राग, द्वेष और भय पर विजय प्राप्त की है और जो अपनी इन्द्रियों पर निग्रह रखता है। जैन धर्म में अपने अपने कर्मों के अनुसार ही ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र की कल्पना की गई है, किसी जाति विशेष में उत्पन्न होने से नहीं। महावीर ने अनेक म्लेच्छ, चोर, डाकू, मछुए, वेश्या और चांडालपुत्रों को जैन धर्म में दीक्षित किया था। इस प्रकार के अनेक कथानक जैन ग्रन्थों में पाए जाते हैं।

जैन पन्थ के सभी तीर्थंकर क्षत्रिय कुल में हुए थे। इससे मालूम होता है कि पूर्वकाल में जैन धर्म क्षत्रियों का धर्म था, लेकिन आजकल अधिकांश वैश्य लोग ही इसके अनुयायी हैं। वैसे दक्षिण भारत में सेतवाल आदि कितने ही जैन खेतीबारी का धंधा करते हैं। पंचमों में ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य इन तीनों वर्णों के धंधे करनेवाले लोग पाए जाते हैं। जिनसेन मठ (कोल्हापुर) के अनुयायियों को छोड़कर और किसी मठ के अनुयायी चतुर्थ नहीं कहे जाते। चतुर्थ लोग साधारणतया खेती और जमींदारी करते हैं। सतारा और बीजापुर जिलों में कितने ही जैन धर्म के अनुयायी जुलाहे, छिपी, दर्जी, सुनार और कसेरे आदि का पेशा करते हैं।[11]

जैन ग्रंथों में सात तत्त्वों का वर्णन मिलता हैं। यह हैं-

1. जीव- जैन दर्शन में आत्मा के लिए "जीव" शब्द का प्रयोग किया गया हैं। आत्मा द्रव्य जो चैतन्यस्वरुप है। [4]
2. अजीव- जड़ या की अचेतन द्रव्य को अजीव (पुद्गल) कहा जाता है।
3. आस्रव - पुद्गल कर्मों का आस्रव करना
4. बन्ध- आत्मा से कर्म बन्धना
5. संवर- कर्म बन्ध को रोकना
6. निर्जरा- कर्मों को क्षय करना
7. मोक्ष - जीवन व मरण के चक्र से मुक्ति को मोक्ष कहते हैं।

जैन धर्म में श्रावक और मुनि दोनों के लिए पाँच व्रत बताए गए है। तीर्थंकर आदि महापुरुष जिनका पालन करते है, वह महाव्रत कहलाते है [5]-

1. अहिंसा - किसी भी जीव को मन, वचन, काय से पीड़ा नहीं पहुँचाना। किसी जीव के प्राणों का घात नहीं करना।
2. सत्य - हित, मित, प्रिय वचन बोलना।
3. अस्तेय - बिना दी हुई वस्तु को ग्रहण नहीं करना।
4. ब्रह्मचर्य - मन, वचन, काय से मैथुन कर्म का त्याग करना।
5. अपरिग्रह- पदार्थों के प्रति ममत्वरूप परिणमन का बुद्धिपूर्वक त्याग।[6]

मुनि इन व्रतों का सूक्ष्म रूप से पालन करते है, वही श्रावक स्थूल रूप से करते है। जैन ग्रंथों के अनुसार जीव और अजीव, यह दो मुख्य पदार्थ हैं।[7] आस्रव, बन्ध, संवर, निर्जरा, मोक्ष, पुण्य, पाप अजीव द्रव्य के भेद हैं। जैन धर्म के अनुसार लोक ६ द्रव्यों (substance) से बना है। यह ६ द्रव्य शाश्वत हैं अर्थात इनको बनाया या मिटाया नहीं जा सकता।[7] यह है जीव, पुद्गल, धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाश और काल।[12]

- सम्यक् दर्शन - सम्यक् दर्शन को प्रगताने के लिए तत्त्व निर्णय की साधना करनी चहिये | तत्त्व निर्णय - मै इस शरीर आदि से भिन्न एक अखंड अविनाशी चैतन्य तत्त्व भगवान आत्मा हू, यह शरीरादी मै नहीं और यह मेरे नहीं |

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580| A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

| Volume 10, Issue 4, April 2023 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2023.1004013 |

- सम्यक् ज्ञान - सम्यक ज्ञान प्रगताने के लिए भेद ज्ञान की साधना करनी चहिये | भेद ज्ञान - जिस जीव का, जिस द्दव्य का जिस समय जो कुछ भी होना है, वह उसकी तत्समय की योग्यतानुसार हो रहा है और होगा। उसे कोई ताल फेर बदल सकता नहीं।
- सम्यक् चारित्र - सम्यक चारित्र की साधना के लिए वस्तु स्वरुप की साधना करना चहिये। सम्यक चरित्र का तात्पर्य नैैतिक आचरण से है | पंचमहाव्रत का पालन ही शिक्षा है जो चरित्र निर्माण करती है|

यह रत्नत्रय आत्मा को छोड़कर अन्य किसी द्रव्य में नहीं रहता।[7] सम्यक्त्व के आठ अंग है —निःशंकितत्त्व, निःकांक्षितत्त्व, निर्विचिकित्सत्त्व, अमूढद्दष्टित्व, उपबृंहन / उपगूहन, स्थितिकरण, प्रभावना, वात्सल्य। क्रोध, मान, माया, लोभ यह चार कषाय है जिनके कारण कर्मों का आस्रव होता है। इन चार कषाय को संयमित रखने के लिए माध्यस्थता, करुणा, प्रमोद, मैत्री भाव धारण करना चहिये | चार गतियाँ जिनमें संसरी जीव का जन्म मरण होता रहता है— देव गति, मनुष्य गति, तिर्यंच गति, नर्क गति। मोक्ष को पंचम गति भी कहा जाता है। नाम निक्षेप, स्थापना निक्षेप, द्रव्य निक्षेप, भाव निक्षेप। अहिंसा और जीव दया पर बहुत ज़ोर दिया जाता है। सभी जैन शाकाहारी होते हैं।अहिंसा का पालन करना सभी मुनियो और श्रावकों का परम धर्म होता है। जैन धर्म का मुख्य वाक्य हि "अहिंसा परमो धर्म" है। अनेकान्त का अर्थ है- किसी भी विचार या वस्तु को अलग अलग दष्टिकोण से देखना, समझना, परखना और सम्यक भेद द्धारा सर्व हितकारी विचार या वस्तु को मानना ही अंनेकात है । स्यादवाद का अर्थ है- विभिन्न अपेक्षाओं से वस्तुगत अनेक धर्मों का प्रतिपादन।[8] यह जैन धर्म का परम पवित्र और अनादि मूलमंत्र[13] है जो प्राकृत भाषा में है-

णमो अरिहंताणं। णमो सिद्धाणं। णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं। णमो लोए सव्वसाहूणं॥

अर्थात अरिहंतों को नमस्कार, सिद्धों को नमस्कार, आचार्यों को नमस्कार, उपाध्यायों को नमस्कार, सर्व साधुओं को नमस्कार। ये पंच परमेष्ठी हैं।

जिस प्रकार काल हिंदुओं में मन्वंतर कल्प आदि में विभक्त है उसी प्रकार जैन में काल दो प्रकार का है— उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी। अवसर्पिणी काल में समयावधि, हर वस्तु का मान, आयु, बल इत्यादि घटता है जबकि उत्सर्पिणी में समयावधि, हर वस्तु का मान और आयु, बल इत्यादि बढ़ता है इन दोनों का कालमान दस क्रोड़ाक्रोड़ी सागरोपम का होता है अर्थात एक समयचक्र बीस क्रोड़ाक्रोड़ी सागरोपम का होता है। प्रत्येक उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी में 24 तीर्थंकर, 12 चक्रवर्ती, 9 बलदेव, 9 नारायण और 9 प्रतिनारायण का जन्म होता है। इन्हें त्रिसठ श्लाकापुरुष कहा जाता है। ऊपर जो २४ तीर्थंकर गिनाए गए हैं वे वर्तमान अवसर्पिणी के हैं। प्रत्येक उत्सिर्पिणी या अवसर्पिणी में नए नए जीव तीर्थंकर हुआ करते हैं। इन्हीं तीर्थंकरों के उपदेशों को लेकर गणधर लोग द्वादश अंगो की रचना करते हैं। ये ही द्वादशांग जैन धर्म के मूल ग्रंथ माने जाते है। जैन धर्म कितना प्राचीन है, ठीक ठीक नहीं कहा जा सकता। महावीर स्वामी या वर्धमान ने ईसा से ४६८ वर्ष पूर्व निर्वाण प्राप्त किया था। इसी समय से पीछे कुछ लोग विशेषकर यूरोपियन विद्वान् जैन धर्म का प्रचलित होना मानते हैं। जैनों ने अपने ग्रंथों को आगम, पुराण आदि में विभक्त किया है। प्रो॰ जेकोबी आदि के आधुनिक अन्वेषणों के अनुसार यह सिद्ध किया गया है की जैन धर्म बौद्ध धर्म से पहले का है। उदयगिरि, जूनागढ आदि के शिलालेखों से भी जैनमत की प्राचीनता पाई जाती है। हिन्दू ग्रन्थ, स्कन्द पुराण (अध्याय ३७) के अनुसार: "ऋषभदेव नाभिराज के पुत्र थे, ऋषभ के पुत्र भरत थे, और इनके ही नाम पर इस देश का नाम "भारतवर्ष" पड़ा"|[9]

भारतीय ज्योतिष में यूनानियों की शैली का प्रचार विक्रमीय संवत् से तीन सौ वर्ष पीछे हुआ। पर जैनों के मूल ग्रंथ अंगों में यवन ज्योतिष का कुछ भी आभास नहीं है। जिस प्रकार वेद संहिता में पंचवर्षात्मक युग है और कृत्तिका से नक्षत्रों की गणना है उसी प्रकार जैनों के अंग ग्रंथों में भी है। इससे उनकी प्राचीनता सिद्ध होती है।

तीर्थंकर महावीर के समय तक अविछिन्न रही जैन परंपरा ईसा की तीसरी सदी में दो भागों में विभक्त हो गयी : दिगंबर और श्वेताम्बर। मुनि प्रमाणसागर जी ने जैनों के इस विभाजन पर अपनी रचना 'जैनधर्म और दर्शन' में विस्तार से लिखा है कि आचार्य भद्रबाहु ने अपने ज्ञान के बल पर जान लिया था कि उत्तर भारत में १२ वर्ष का भयंकर अकाल पड़ने वाला है इसलिए उन्होंने सभी साधुओं को निर्देश दिया कि इस भयानक अकाल से बचने के लिए दक्षिण भारत की ओर विहार करना चाहिए। आचार्य भद्रबाहु के साथ हजारों जैन मुनि (निर्ग्रन्थ) दक्षिण की ओर वर्तमान के तमिलनाडु और कर्नाटक की ओर प्रस्थान कर गए और अपनी साधना में लगे रहे। परन्तु कुछ जैन साधु उत्तर भारत में ही रुक गए थे। अकाल के कारण यहाँ रुके हुए साधुओं का निर्वाह आगमानुरूप नहीं हो पा रहा था इसलिए उन्होंने अपनी कई क्रियाएँ शिथिल कर लीं, जैसे कटि वस्त्र धारण करना, ७ घरों से भिक्षा ग्रहण करना, १४ उपकरण साथ में रखना आदि। १२ वर्ष बाद दक्षिण से लौट कर आये साधुओं ने ये सब देखा तो उन्होंने यहाँ रह रहे साधुओं को समझाया कि आप लोग पुनः तीर्थंकर महावीर की परम्परा को अपना लें पर साधु राजी नहीं हुए और तब जैन धर्म में दिगंबर और श्वेताम्बर दो सम्प्रदाय बन गए।[14]

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580| A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

| Volume 10, Issue 4, April 2023 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2023.1004013 |

दिगम्बर साधु (निर्ग्रन्थ) वस्त्र नहीं पहनते है, नग्न रहते हैं|दिगम्बर मत में तीर्थकरों की प्रतिमाएँ पूर्ण नग्न बनायी जाती हैं और उनका श्रृंगार नहीं किया है। दिगंबर समुदाय तीन में भागों विभक्त हैं।

- तारणपंथ
- दिगम्बर तेरापन्थ
- बीसपंथ

श्वेताम्बर एवं साध्वियाँ और संन्यासी श्वेत वस्त्र पहनते हैं, तीर्थकरों की प्रतिमाएँ प्रतिमा पर धातु की आंख, कुंडल सहित बनायी जाती हैं और उनका शृंगार किया जाता है।

श्वेताम्बर भी दो भाग मे विभक्त है: मूर्तिपूजक एवं अमूर्तिपूजक

1. मूर्तिपूजक - यॆ तीर्थकरों की प्रतिमाओं की पूजा करतॆ हैं।
2. अमूर्तिपूजक - ये मूर्ति पूजा नहीँ करते। द्रव्य पूजा की जगह भाव पूजा में विश्वास करते हैं।

अमूर्तिपूजक के भी दो भाग हैं:-

1. स्थानकवासी
2. श्वेताम्बर तेरापन्थ
3. दिगम्बर आचार्यों द्वारा समस्त जैन आगम ग्रंथो को चार भागो में बांटा गया है -
4. (१) प्रथमानुयोग
5. (२) करनानुयोग
6. (३) चरणानुयोग
7. (४) द्रव्यानुयोग
8. तत्त्वार्थ सूत्र- सभी जैनों द्वारा स्वीकृत ग्रन्थ[15]

विचार-विमर्श

जैन धर्म के त्रिरत्न – सम्यक ज्ञान, सम्यक दर्शन, सम्यक आचरण। सम्यक ज्ञान – सत्य तथा असत्य का ज्ञान ही सम्यक ज्ञान है। सम्यक दर्शन – यथार्थ ज्ञान के पर्ति श्रद्धा ही सम्यक दर्शन है। सम्यक चरित्र (आचरण) – अहितकर कार्यों का निषेध तथा हितकारी कार्यों का आचरण ही सम्यक चरित्र है। त्रिरत्न एक संस्कृत शब्द है, जिसका शाब्दिक अर्थ है- 'तीन रत्न'। पालि भाषा में इसे 'ति-रतन' लिखा जाता है। इसे 'त्रिध' या 'त्रिगुण शरण' भी कहते हैं, जो बौद्ध और जैन के तीन घटक हैं। जैन धर्म में तीन रत्न, जिसे 'रत्नत्रय' भी कहते हैं, को 'सम्यक दर्शन' (सही दर्शन), 'सम्यक ज्ञान' और 'सम्यक चरित्र' के रूप में मान्यता प्राप्त है। इनमें से किसी का भी अन्य दो के बिना अलग से अस्तित्व नहीं हो सकता है तथा आध्यात्मिक मुक्ति या मोक्ष के लिए तीनों आवश्यक हैं। कला में त्रिरत्न को अक्सर त्रिशूल से दर्शाया जाता है।[1] मोक्ष प्राप्त करने के लिए तीन मार्ग (तिरत्न) बताए गए हैं। वे 3 मार्ग ये हैं-

1. सम्यक दर्शन- सब तत्वों में अंतर्दष्टि- जीव, अजीव, आस्रव, कर्म बंध, संवर, निर्जरा और मोक्ष।
2. सम्यक ज्ञान- वास्तविक विवेक।
3. सम्यक चरित्र- दोष रहित और पवित्र आचरण। इसके दो रूप हैं- श्रावकाचार- ये गृहस्थों के लिए है। श्रमणाचार- ये मुनियों के लिए है। दोनों का लक्ष्य एक है- अहिंसा का पालन। जैन धर्म में प्रचलित इस शब्द का प्रयोग हिन्दी साहित्य में किया गया है।[2]

दुनिया के सबसे प्राचीन धर्म जैन धर्म को "श्रमणों का धर्म" कहा जाता है। आपकी बेहतर जानकारी के लिए बता दे की जैन शब्द जिन शब्द से बना है। जिन बना है 'जि' धातु से जिसका अर्थ है जीतना। जिन अर्थात जीतने वाला। जिसने स्वयं को जीत लिया उसे जितेंद्रिय कहते हैं। जैन दर्शन के अनुसार तीन मार्ग या त्रि मार्ग या त्रि-रत्न आत्मा की शुद्धि और मुक्ति प्राप्त करने के तरीके हैं क्योंकि परमानंद

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580| A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

| Volume 10, Issue 4, April 2023 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2023.1004013 |

केवल मुक्त शुद्ध आत्मा (सिद्ध) ब्रह्मांड के शिखर (सिद्धशिला) तक जाती है और वहां शाश्वत में निवास करती है। यहाँ हम आपको निम्नलिखित बिन्दुओं द्वारा जैन धर्म के त्रिरत्न सिद्धांतों से अवगत करा रहे है, [16]जो इस प्रकार है...

सम्यक विश्वास

सम्यक ज्ञान

सम्यक आचरण

जैन धर्म का संस्थापक "ऋषभ देव" (jainism founder) को माना जाता है, जो जैन धर्म के पहले तीर्थंकर थे और भारत के चक्रवर्ती सम्राट भरत के पिता थे। वेदों में प्रथम तीर्थंकर ऋषभनाथ का उल्लेख मिलता है। ऐसा माना जाता है कि वैदिक साहित्य में जिन यतियों और व्रात्यों का उल्लेख मिलता है वे ब्राह्मण परंपरा के न होकर श्रमण परंपरा के ही थे। जैसा की हम सब जानते है जैन धर्म की शिक्षाएँ (teachings of jainism) समानता, अहिंसा, आध्यात्मिक मुक्ति और आत्म-नियंत्रण के विचारों पर बल देती हैं। महावीर ने युगों को जो पढ़ाया है उसका आधुनिक जीवन में अभी भी महत्व है। जैन एक महत्वपूर्ण धार्मिक समुदाय हैं और जैन धर्म जनसंख्या को समृद्ध करने वाले पुण्य के विभिन्न सिद्धांतों पर प्रचार करता है। ये दोनों सम्प्रदाय है और दोनों संप्रदायों में मतभेद दार्शनिक सिद्धांतों से ज्यादा चरित्र को लेकर है। दिगंबर (jainism god) आचरण पालन में अधिक कठोर हैं जबकि श्वेतांबर कुछ उदार हैं। आपकी बेहतर जानकारी के लिए बता दे की श्वेतांबर संप्रदाय के मुनि श्वेत वस्त्र पहनते हैं जबकि दिगंबर मुनि निर्वस्त्र रहकर साधना करते हैं। यह नियम केवल मुनियों पर लागू होता है। जैन धर्म (history of jainism) में तीर्थंकर वह व्यक्ति हैं जिन्होनें पूरी तरह से क्रोध, अभिमान, छल, इच्छा, आदि पर विजय प्राप्त की हो वह तीर्थंकर कहलाता है। तीर्थंकर शब्द को 24 व्यक्तियों के लिए प्रयोग किया जाता है। आपकी बेहतर जानकारी के लिए बता दें की अरिहंत और जिनेन्द्र भी तीर्थंकर के ही रूप है।[17]

परिणाम

जैन धर्म के त्रिरत्न

जैन जीवन का उद्देश्य आत्मा की मुक्ति प्राप्त करना है।

यह जैन नैतिक संहिता का पालन करके किया जाता है, या इसे सीधे शब्दों में कहें तो जैन नैतिकता के तीन रत्नों का पालन करके सही ढंग से जीना।

इसके तीन अंग हैं- सम्यक विश्वास, सम्यक ज्ञान और सम्यक आचरण। पहले दो बहुत निकट से जुड़े हुए हैं।

सम्यक् विश्वास - सम्यक दर्शन

इसका मतलब यह नहीं है कि आपको जो बताया गया है उस पर विश्वास करें, बल्कि इसका मतलब है चीजों को ठीक से देखना (सुनना, महसूस करना आदि), और स्पष्ट रूप से देखने के रास्ते में आने वाली पूर्व धारणाओं और अंधविश्वासों से बचना।

कुछ पुस्तकें सम्यक दर्शन को "सही धारणा" कहती हैं। आप इसे तब तक प्राप्त नहीं कर सकते जब तक कि आप सत्य को खोजने के लिए दृढ़ न हों, और इसे असत्य से अलग न करें।

सम्यक ज्ञान - सम्यक ज्ञान

इसका अर्थ है वास्तविक ब्रह्मांड का सटीक और पर्याप्त ज्ञान होना - इसके लिए ब्रह्मांड के पांच (या छह) पदार्थों और नौ सत्यों का सही ज्ञान होना आवश्यक है - और उस ज्ञान को सही मानसिक दृष्टिकोण के साथ रखना।[12]

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580| A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

| Volume 10, Issue 4, April 2023 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2023.1004013 |

एक लेखक इसे इस तरह रखता है: "यदि हमारा चरित्र त्रुटिपूर्ण है और हमारा विवेक स्पष्ट नहीं है, तो केवल ज्ञान हमें संयम और खुशी प्राप्त करने में मदद नहीं करेगा"।

आज इसका मतलब जैन शास्त्रों का उचित ज्ञान होना है ।

कुछ लेखक सही ज्ञान का वर्णन शुद्ध आत्मा होने के रूप में करते हैं ; एक आत्मा जो आसक्ति और इच्छा से मुक्त है... दूसरे कहते हैं कि एक व्यक्ति जिसके पास सही ज्ञान है वह स्वाभाविक रूप से खुद को आसक्ति और इच्छा से मुक्त कर लेगा, और इस तरह मन की शांति प्राप्त करेगा।

सही आचरण - सम्यक चरित्र

इसका अर्थ है जैन नैतिक नियमों के अनुसार अपना जीवन जीना , जीवित चीजों को नुकसान पहुंचाने से बचना और खुद को आसक्ति और अन्य अशुद्ध दृष्टिकोणों और विचारों से मुक्त करना।

जैनियों का मानना है कि एक व्यक्ति जिसके पास सही विश्वास और सही ज्ञान है, वह प्रेरित होगा और सही आचरण प्राप्त करने में सक्षम होगा।

कई जैनियों का मानना है कि सही विश्वास और सही ज्ञान के बिना एक व्यक्ति सही आचरण प्राप्त नहीं कर सकता है - इसलिए गलत कारणों से शास्त्र और अनुष्ठान का पालन करने का कोई मतलब नहीं है (जैसे कि अन्य लोग आपको एक अच्छा व्यक्ति समझें)। सभी जैन इस दृष्टिकोण को नहीं रखते हैं।[14]

जैन भारत का सबसे प्राचीन धर्मों में से एक है।जैन धर्म के आदि पुरुष ऋषभदेव जी थे थे। जैन साहित्य के अनुसार जैन धर्म के प्रवर्तक महावीर स्वामी इस धर्म के 24वें तीर्थंकर थे। महावीर स्वामी का जन्म 599 ईसा पूर्व में वैशाली के निकट कुंड नामक ग्राम में हुआ था।इनकी माता का नाम त्रिशला और पिता का नाम सिद्धार्थ था। युवावस्था में महावीर स्वामी का विवाह राजकुमारी यशोदा से हो गया था।अपने पिता की मृत्यु के पश्चात महावीर स्वामी ने सन्यास धारण कर लिया। और 12 वर्ष तक कठोर तपस्या की।12 वर्ष की अवधि के पश्चात उन्हें ज्ञान की प्राप्ति हुई ।ज्ञान की प्राप्ति के पश्चात महावीर स्वामी ने जैन धर्म के प्रचार का कार्य प्रारंभ किया । धर्म प्रसार के लिए आजीवन प्रयास करते हुए ही 527 ईसा पूर्व पूर्व में पटना के निकट पावापुरी नामक स्थान पर महावीर स्वामी ने देह त्याग दिया। धार्मिक क्रांति के युग में महावीर स्वामी ने जैन धर्म का प्रचार प्रसार किया। जैन धर्म के सम्प्रदाय को दो भागों में बांटा गया हैं।[16]

1. श्वेताम्बर
2. दिगम्बर

श्वेतांबर संप्रदाय जैन धर्म का एक प्रमुख संप्रदाय है इस संप्रदाय के साधुओं श्वेत रंग के वस्त्र धारण करते हैं। और जैन धर्म की कठोरता और जटिलता को कम करने के पक्ष पाती होते हैं। दिगंबर संप्रदाय जैन धर्म का एक अन्य प्रमुख संप्रदाय है इस शाखा के साधु नग्न अवस्था में रहते हैं और दिशाओं को भी अपना वस्त्र मानते हैं ।यह कठोर तपस्वी होते हैं।एवं महावीर स्वामी द्वारा प्रतिपादित जैन धर्म के प्राचीन और कठोर और नियमों का पालन करते हैं।

जैन धर्म के कुछ महत्वपूर्ण ग्रन्थ हैं जो निम्नलिखित हैं।

1. जैन आगम सूत्र
2. परिशिष्ट पर्वन

जैन धर्म के प्रमुख सिद्धांत निम्नलिखित है। जैन धर्म अनुयाई ईश्वर की सृष्टि का निर्माता एवं पालन करता नहीं मानते है। यह धर्म संसार को किसी सृजन कार्य की रचना नहीं मानते हैं ।महावीर स्वामी के अनुसार ईश्वर नाम की ऐसी कोई सत्ता नहीं है। जो जीव जंतुओं के सुख या दुख की निर्धारण करती हो ।स्वयं के कर्मों के अनुरूप ही लोगों को सुख दुख मिलता है। जैन धर्म के अनुयाई वेदों में विश्वास नहीं करते

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580| A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

| Volume 10, Issue 4, April 2023 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2023.1004013 |

हैं।वेदों में ईश्वर और सृष्टि के बारे में जो कुछ कहा गया है।उस पर इनका विश्वास नहीं है। वह केवल महावीर स्वामी के सिद्धांतों पर विश्वास करते हैं। जैन धर्म के मुख्य त्रिरत्न ने निम्नलिखित हैं।सम्यक ज्ञान,सम्यक दर्शन,सम्यक चरित्र[16]

जैन धर्म के अनुसार मोक्ष प्राप्ति के लिए पांच आने नियमों का पालन करना ही अति आवश्यक है। इन्हें पांच अणु व्रत कहा जाता है। यह निम्नलिखित हैं।

1. अहिंसा – इसका अर्थ जीवों के प्रति दया का व्यवहार
2. सत्य – सत्य बोलना सत्य बोलने के लिए मनुष्य को लोभ मोह माया एवं क्रोध से दूर रहना चाहिए।
3. अस्तेय – इसका आशय चोरी न करना तथा चोरी की योजनाएं बनाना।
4. अपरिग्रह – इसका अर्थ है सांसारिक वस्तुओं का संग्रह करने के लिए मोह छोड़ देना।
5. ब्रम्हचर्य – इसका अर्थ है इंद्रियों को वश में करते हुए सच्चरित्र जीवन व्यतीत करना[11]

निष्कर्ष

जैन धर्म का अनुवाद में विश्वास करता है इस सिद्धांत के अनुसार जो इस संसार में जन्म लेता है उसे अपने इस जन्म और पूर्व जन्म के कर्मों के अनुसार फल की प्राप्ति होती है कर्म के आधार पर ही जीव कोयो नियम सुख-दुख की प्राप्ति होती है जैन दर्शन में कर्मबंधन तीन बलों – मन बल , वचन बल और काय बल द्वारा स्वीकार किया जाता है। अर्थात मन में विचार कर लेने से ही शुभ एवं अशुभ कर्मों का बंधन हो जाता है। जैन धर्म के अनुयायियों का मत है कि मनुष्य पूर्व जन्म के कर्मों को भोगने के लिए ही बार बार जन्म लेता है। जब उसकी आत्मा यह जन्म मरण के बंधन से मुक्त हो जाती है। महावीर स्वामी चेतन प्राणियों में आत्मा का अस्तित्व मानते थे।इसी आधार पर यह माना जाता है कि प्रत्येक जीव में एक की स्थाई अजर अमर आत्मा निवास करती है।और जीव की मृत्यु हो जाने पर उसकी आत्मा नया शरीर धारण कर लेते हैं। भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण से पदार्थों को जानकर विभिन्न धर्मों अपने एकाकी ज्ञान को ही पूर्ण सत्य ज्ञान मानकर दूसरे मत के सिद्धांत को असत्य सिद्ध करने का प्रयास करते हैं। तथा परस्पर संघर्ष से पूर्ण वाद विवाद करते हैं।जैन धर्म में मत के पारस्परिक वाद विवाद को दूर करने के लिए अनेकांतवाद का प्रतिपादन किया अर्थात कोई भी सिद्धांत अथवा कथन पूर्णरूपेण सत्य या असत्य नहीं है। स्यादवाद जैन धर्म का सबसे महत्वपूर्ण सिद्धांत है। इसका अर्थ यह हैं कि जो बात कही जा रही है वह किसी विशेष अपेक्षा से कहीं जा रही है। किंतु यह बात अन्य दृष्टिकोण से या अन्य अपेक्षाओं से भी कही जा सकती है। और नहीं भी कही जा सकती अर्थात प्रत्येक दृष्टिकोण में सत्य और असत्य पर व्यक्ति की अपेक्षाओं के अनुसार छिपा रहता है। जैन धर्म कर त्योहार हैं वो अग्रलिखित हैं।पंचकल्याणक,पर्युषण,महावीर जयंती,ऋषि पंचमी,ज्ञान पंचमी,जैन धर्म मे दीपावली,दशलक्षणधर्म[17]

संदर्भ

1. "जैन धर्म क्या है?". Hindi webdunia. मूल से 4 अगस्त 2019 को पुरालेखित.
2. ↑ श्रीमद्भागवत पंचम स्कन्ध, चतुर्थ अध्याय, श्लोक ९
3. ↑ Zimmer 1953, पृ° 182-183.
4. ↑ शास्त्री २००७, पृ° ६४.
5. ↑ प्रमाणसागर २००८, पृ° १८९.
6. ↑ जैन २०११, पृ° ९३.
7. ↑ आचार्य नेमिचन्द्र २०१३.
8. ↑ प्रमाणसागर २००८.
9. ↑ Sangave २००१, पृ° २३.
10. प्रमाणसागर, मुनि (२००८), जैन तत्त्वविद्या, भारतीय ज्ञानपीठ, आई°ऍस°बी°ऍन° 978-81-263-1480-5, मूल से 25 सितंबर 2015 को पुरालेखित, अभिगमन तिथि 10 जनवरी 2016
11. जैन, विजय कुमार (२०११), आचार्य उमास्वामी तत्त्वार्थसूत्र, Vikalp Printers, आई°ऍस°बी°ऍन° 978-81-903639-2-1, मूल से 22 दिसंबर 2015 को पुरालेखित, अभिगमन तिथि 17 जनवरी 2016

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580| A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

| Volume 10, Issue 4, April 2023 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2023.1004013 |

12. आचार्य नेमिचन्द्र (२०१३), द्रव्यसंग्रह, Vikalp Printers, आईऍसबीऍन 81-903639-5-6, मूल से 4 मार्च 2016 को पुरालेखित, अभिगमन तिथि 17 जनवरी 2016
13. Sangave, Vilas Adinath (२००१), Facets of Jainology: Selected Research Papers on Jain Society, Religion, and Culture, Mumbai: Popular prakashan, आईऍसबीऍन 81-7154-839-3
14. Zimmer, Heinrich (1953) [April 1952], Campbell, Joseph (संपा°), Philosophies Of India, London, E.C. 4: Routledge & Kegan Paul Ltd, आईऍसबीऍन 978-81-208-0739-6, मूल से 15 दिसंबर 2015 को पुरालेखित, अभिगमन तिथि 20 सितंबर 2015
15. शास्त्री, प. कैलाशचन्द्र (२००७), जैन धर्म, आचार्य शंतिसागर 'छाणी' स्मृति ग्रन्थमाला, आईऍसबीऍन 81-902683-8-4
16. भारत ज्ञानकोश, खण्ड-2 |लेखक: इंदु रामचंदानी |प्रकाशक: एंसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली और पॉप्युलर प्रकाशन, मुम्बई |संकलन: भारतकोश पुस्तकालय |पृष्ठ संख्या: 398 |
17. ↑ पुस्तक- पौराणिक कोश |लेखक- राणा प्रसाद शर्मा | पृष्ठ संख्या- 561

INNO SPACE
SJIF Scientific Journal Impact Factor
Impact Factor: 7.580

doi crossref

निस्केयर NISCAIR

INTERNATIONAL JOURNAL
OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
IN SCIENCE, ENGINEERING, TECHNOLOGY AND MANAGEMENT

+91 99405 72462 +91 63819 07438 ijmrsetm@gmail.com

www.ijmrsetm.com